डाक-पंजीयन म.प्र./भोपाल/4-472/2024-26
पोस्टिंग दिनांक : प्रतिमाह दिनांक 2 से 3, पृष्ठ सं. 140
प्रकाशन दिनांक : 1 से 1 प्रतिमाह

आर.एन.आई क्र. : 38470/83
आई.एस.एस.एन. क्र. : 2456-7167

मूल्य 50/-

42 वाँ वर्ष

फरवरी 2024

अक्षरा 227

साहित्य की मासिकी

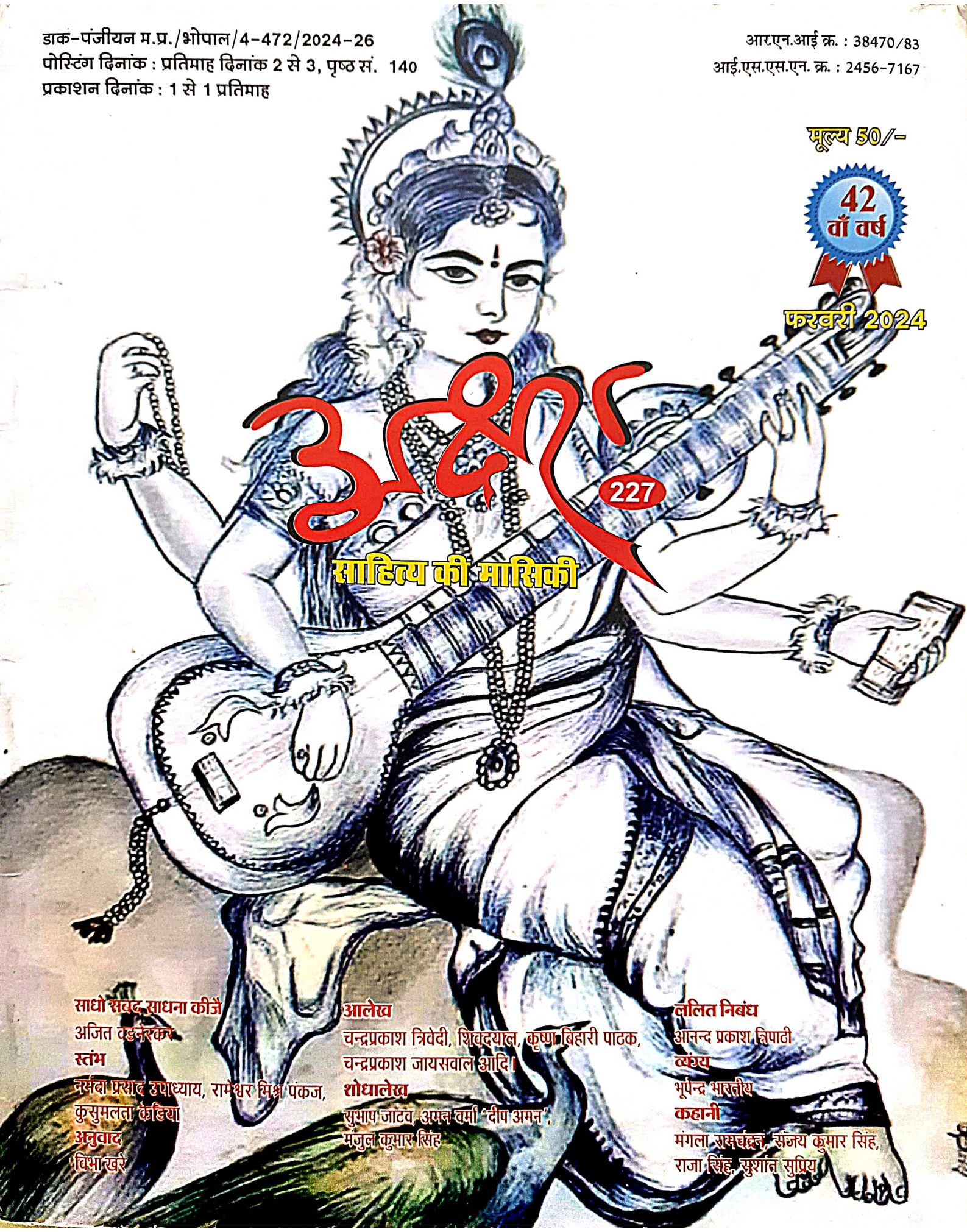

साधो सबद साधना कीजै
अजित वडनेरकर
स्तंभ
नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, रामेश्वर मिश्र पंकज, कुसुमलता केडिया
अनुवाद
विभा खरे

आलेख
चन्द्रप्रकाश त्रिवेदी, शिवदयाल, कृष्ण बिहारी पाठक, चन्द्रप्रकाश जायसवाल आदि।
शोधालेख
सुभाष जाटव, अमन वर्मा 'दीप अमन', मंजुल कुमार सिंह

ललित निबंध
आनन्द प्रकाश त्रिपाठी
व्यंग्य
भूपेन्द्र भारतीय
कहानी
मंगला रामचंद्रन, संजय कुमार सिंह, राजा सिंह, सुशांत सुप्रिय

प्रेमचंद के कथा-साहित्य में बाजारवाद

- कृष्ण कुमार मिश्र

जन्म - 15 मार्च 1966।
शिक्षा - एम.एस.सी., पीएच.डी.।
रचनाएँ - पच्चीस पुस्तकें प्रकाशित।
सम्मान - केन्द्रीय हिंदी संस्थान द्वारा आत्माराम पुरस्कार।

भारत एक उत्सवधर्मी देश है। हम खुशियाँ मनाने के लिए हर छोटे-बड़े अवसर को उत्सवधर्मिता में बदल देते हैं। काशी में तो कहावत है, सात वार, नौ त्यौहार। यानी जितने दिन, उससे ज्यादा त्यौहार। वैसे मानसून के बाद देश के अधिकांश हिस्सों में तमाम तीज त्यौहारों का मौसम शुरू हो जाता है। यह दौर करीब होली तक तो व्यापक रूप से चलता रहता है। इस समय त्यौहारों का मौसम चल रहा है। लग्न मुहूर्त का भी समय चल रहा है। शादी ब्याह से गाँव नगर गुलजार हैं। बाज़ारों में रौनक है। खरीदारी का दौर चल रहा है। मीडिया में विज्ञापनों का शोर है। बाज़ारवाद से भला आज कोई कैसे बच सकता है?

बकौल अकबर इलाहाबादी;
दुनिया में हूँ दुनिया का तलबगार नहीं हूँ।
बाज़ार से गुज़रा हूँ खरीदार नहीं हूँ।।

बाज़ार से कोई भला इतना अप्रभावित कैसे रह सकता है। साहित्य भी इससे जुदा कैसे रह सकता है। वह तो समाज का दर्पण है। प्रेमचंद की गिनती दुनिया के श्रेष्ठतम कहानीकारों में की जाती है। भारतीय उपमहाद्वीप में प्रेमचंद सरीखा कथाकार कोई दूसरा नहीं है। प्रेमचंद ने कहानी को जीवन से जोड़ दिया। प्रेमचंद के पहले कहानियों में तिलिस्म, ऐय्यारी का बोलबाला था। वह फंतासी का दौर था। लेकिन कथाकार प्रेमचंद ने कहानियों को समाज के किसान, मजदूर, शोषित, वंचितों, के संघर्ष से जोड़ दिया। उन्होंने पुरानी दकियानूसी, पुरातनपंथी तथा रूढ़ियों पर प्रहार किया। वे प्रगतिशील रचनाकार थे। उन्हें समाज की बुराइयों तथा चुनौतियों की गहरी समझ थी।

कहानी एक सम्मोहन की कला है। इसमें व्यक्ति कथा के साथ चलते हुए उससे बहुत गहरे जुड़ जाता है। कहते हैं, कहानी मानव सभ्यता की पहली बौद्धिक अभिव्यक्ति है। जिस क्षण आदिमानव ने अपनी अनुभूतियाँ अपने किसी परिजन या साथी को किसी भी तरीके से संप्रेषित की होंगी, उस क्षण वह विश्व की पहली कहानी सुना रहा होगा। इस दृष्टि से कहानी सभ्यता के आदिकाल से ही मनुष्य के अनुभवों की अभिव्यक्ति का माध्यम रही है। साहित्य जीवन की अभिव्यक्ति है। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो कहानी जीवनानुभवों को व्यक्त करने की साहित्य की सर्वाधिक प्राचीन विधा है। साहित्य समाज का दर्पण है तो कोई कहानी अपने समय की समझ, चिंतन तथा परिस्थितियों का आईना है। कहानियों के द्वारा हम साहित्य की खिड़की से उस दौर के यथार्थ को देख सकते हैं। युग विशेष की कहानी पढ़कर युगीन विशेषताओं की वीथिका में सहज झाँका जा सकता है। हिंदी साहित्य के इतिहास पर दृष्टि डालें तो हर कालखंड में बाजार कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में दृष्टिगोचर होता रहा है। कबीर, सूर, तुलसी, मीरा आदि अनेक कवियों के काव्य में भी बाजार की उपस्थिति है। बाजार और मेलों के साथ जीवन का आनंद और उल्लास जुड़ा हुआ है। एक समय में सामाजिक जीवन में वस्तु-विनिमय बाजार के माध्यम से हुआ करता था। कबीर तो सब की खैर पूछते थे बीच बाजार खड़े होकर। और सबकी खबर भी लेते थे, बिना किसी भय के।

बाज़ार की व्याप्ति :- बाजार मूल्य प्राप्ति का साधन है। मानवीय संवेदनाओं के लिए बाजार में जगह प्राय: कम ही होती है। कभी मनुष्य बाजार में गुलामों के रूप में बिकता था। आज इंसान घर बैठे हुए बाजार का गुलाम है। यद्यपि इस गुलामी का

भान बहुतों को नहीं हो पाता। बाजार की अवधारणा नई नहीं है। जातक कथाओं में नागर समाज में बाजार का उल्लेख बार-बार आया है। बाजार मानव सभ्यता में समाज की अवधारणा के स्थापित होने की प्रक्रिया के साथ ही आकार लेता गया है। बाजार वस्तुओं के क्रय-विक्रय के केन्द्र मात्र नहीं हैं बल्कि मिलने-जुलने के, सांस्कृतिक तथा वैचारिक विनिमय के स्थान भी रहे हैं। अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में यदि कोई ग्रामीण किसी सामग्री को बेचने के लिए हाट-बाजार जाता है तो वह बीच राह में अपनी वस्तु नहीं बेचता है, भले ही उसका दाम ज्यादा मिल रहा हो। वह अपनी वस्तु को बाजार जाकर ही बेचता है भले ही इसके लिए दूरी तय करनी पड़े, और वस्तु की कीमत भी कम मिले। इस प्रकार बाजार की अवधारणा वस्तुतः सामाजिक अवधारणा रही है। हमारे पारंपरिक ग्रामीण हाट-बाजारों ने सामाजिकता व जनसंगठन की भावनाओं को पुष्ट करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

घर में दाखिल है बाजार :- बाजार कभी हमारी जरूरतों की पूर्ति का साधन था। पहल लोगों को बाजार तक जाना पड़ता था। अब वह बाजार हमारे घरों में दाखिल हो चुका है। विज्ञान तथा तकनीकी की उन्नति के साथ समाज में सूचना एवं संचार के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। संचार क्रांति ने बाज़ारवाद को खूब बढ़ावा दिया है। बाजार अब केवल जरूरतों की पूर्ति का साधन मात्र ही नहीं है। वह जरूरतें पैदा करने, तथा उन्हें बढ़ाने का जरिया बन गया है। बाजार हमें प्रेरित करता है कि अमुक वस्तु या सुविधा हासिल कर लेने से हमारा जीवन सुखमय हो जाएगा। वह निजी या पारिवारिक सुख, सामाजिक हैसियत की खातिर खरीदारी को ललचाता है। समय के साथ-साथ बाजार का चेहरा, चरित्र और मूल्य भी बदल गया। यह सर्वविदित है कि अंग्रेज मूलतः व्यापारी बनकर बाजार के उद्देश्य से ही हिन्दुस्तान आए थे। उन्होंने बाजार की जड़ें इतनी पक्की कर दीं कि वे यहाँ के शासक बन गए। भारत सदियों के लिए उनका उपनिवेश बन गया। बीसवीं सदी में बाज़ारवाद को खूब प्रश्रय मिला। इक्कीसवीं सदी में हमारी लगाम बाजार के हाथों सुपुर्द हो चुकी है। यह बाजार हमारे खानपान, स्वास्थ्य, चिकित्सा, फिटनेस, सौंदर्य, मनोरंजन से लेकर हथियारों तक व्यापक तौर पर फैला है। इसने समाज, सत्ता और संवेदना, तीनों को अपने नियंत्रण में ले लिया है। बाजार हमारी भौतिक जरूरतों जैसे रोटी, कपड़ा, मकान, रहन-सहन, सभी को नियंत्रित करने लगा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ बाज़ारवाद के इस दौर में तमाम देशों की सांस्कृतिक विविधता को खतरे में डाल रही हैं।

ईदगाह :- प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' को बालमनोविज्ञान की श्रेष्ठतम् कहानी माना जाता है। इसमें बाजार पूरी शिद्दत से मौजूद है। कहानी का मुख्य चरित्र हामिद अपने साथियों के साथ ईदगाह के मेले में जाता है। वहाँ बाजार सजधज कर मौजूद है। मिठाइयों से लेकर, खिलौनों तक, चरखी हिंडोले से लेकर घरेलू इस्तेमाल की चीजों तक। हामिद के साथी मनपसंद मिठाइयाँ खरीदते खाते हैं, अपनी पसन्द के तरह-तरह के खिलौने भी खरीदते हैं। हामिद का भी मन ललचाता है लेकिन वह अपने लोभ, अपनी भावनाओं पर काबू पा लेता है। उसके पास कुल तीन पैसे ही हैं जिनसे वह मोल-तोल करके घर के लिए एक चिमटा खरीदता है जिससे रोटियाँ सेंकते समय उसकी दादी माँ का हाथ न जले। बालमनोविज्ञान तथा शिक्षाशास्त्री कहते हैं बच्चे सहज ही बाजार की चीजों की ओर आकर्षित होते हैं। लेकिन हामिद बाजार की चमक-दमक तथा प्रलोभनों से खुद को बचाते हुए अपने घर के लिए एक बेहद जरूरी चीज खरीदकर घर लाता है। इस कहानी में यह दिखाया गया है कि बाजार एक मनुष्य के जीवन मूल्यों तथा आदर्शों पर हावी नहीं हो सका है। वास्तव में यह कहानी बाज़ारवाद पर मानवीय संवेदना की जीत का जीवंत दस्तावेज है। इस कहानी का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि बाज़ारवाद से खुद को बचाने का त्याग एक बालक द्वारा किया गया है जो बड़े आसानी से आकृष्ट हो जाता है।

कफ़न :- बाज़ारवाद के संदर्भ में प्रेमचंद की ही एक अन्य कहानी 'कफन' का जिक्र करना जरूरी है। यह कालजयी कृति है जिसे प्रेमचंद ने अपने जीवन के अंतिम वर्ष में लिखा है। साहित्य के समालोचक इसे महान कथाकार की सबसे पुष्ट रचना कहते हैं। यह कहानी ईदगाह के बरक्स एक-दूसरे धरातल पर खड़ी नजर आती है। इसमें यह साफ दिखाई पड़ता है कि बाजार ने किस तरह मनुष्य तथा मनुष्यता को अपनी आगोश में

ले रखा है। कहानी के पात्र घीसू तथा माधव पिता-पुत्र हैं जो गाँव में बेहद गरीब हैं, अभावग्रस्त है, तथा दुखी हैं। कहानी में माधव की औरत रात में प्रसवपीड़ा से छटपटाती हुई दम तोड़ देती है। सुबह उसके क्रिया कर्म के लिए वे दोनों गाँव के जमींदार के पास जाते हैं जहाँ से उन्हें कुछ रुपए मिल जाते हैं। फिर जमींदार के रुपए का हवाला देकर वे अन्य ग्रामीणों से भी पैसे इकट्ठा करते हैं। इस तरह उनके पास कुल पाँच रुपए की ठीक-ठाक राशि जुट जाती है जिसे लेकर वे बाजार में कफन लेने जाते हैं। इधर-उधर कई दूकानों पर वे गए लेकिन कुछ पसन्द नहीं आया। फिर विचरण करते वे मधुशाला में दाखिल हो जाते हैं। वहाँ काफी पैसा वे शराब तथा चखने पर खर्च कर रहे हैं। उनका यह आचरण मानव मूल्यों के पतन की पराकाष्ठा है। घीसू-माधव लोक और लाज, दोनों से बेफिक्र दूकान पर छक रहे हैं। यह कहानी दिखाती है कि बाजार किस कदर मानव मूल्यों पर हावी ही नहीं है बल्कि उसने इंसान के जमीर को भी मार देने में कोई कसर बाकी नहीं रखी है। घीसू-माधव दोनों इस बात पर खुश हैं कि जीवन में उन्हें पहली बार इस तरह भरपूर बिना रोकटोक खाने-पीने का सुअवसर मिला है। कहानी में इस परमतृप्ति पर उनका परस्पर संवाद हमारी चेतना को झकझोर देता है। जब जीवन की समस्त तृष्णाएँ जिह्वा पर आ टिकें, तथा उसकी पूर्ति के लिए इंसान कुछ भी कर गुजरने को तत्पर हो जाए, तो समझिए बाज़ारवाद अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल हो गया है। यह कहानी बाज़ारवाद से उपजे मूल्यहीन चेहरे को हमारे समक्ष अनावृत्त करती है। कथ्य, शिल्प और संदेश की दृष्टि से यह एक विलक्षण रचना है।

दो बहनें :- प्रेमचंद की एक अन्य कहानी 'दो बहनें' में भी बाजार मौजूद है। कहानी में रामदुलारी तथा रूपकुमारी दो बहनें हैं जो लम्बे समय बाद किसी रिश्तेदार के यहाँ मिलती हैं। रामदुलारी के पति किसी कंपनी के एजेन्ट हैं। रामदुलारी सुविधासंपन्न है जब कि रूपकुमारी उसके मुकाबले आर्थिक तौर पर कमजोर है। वहाँ रामदुलारी अपनी संपन्नता का बखान करती है, वह सोने-चाँदी से लदी लकदक पोशाक में है। दोनों में वार्तालाप होता है जिसमें रामदुलारी अपनी बहन को हेयदृष्टि से देखती है। यद्यपि रूपकुमारी के पति बहुत शिक्षित हैं लेकिन पैसे कमाने की दृष्टि से कमजोर हैं। रामदुलारी का कथन द्रष्टव्य है-एम.ए. तो सभी पास हो सकते हैं लेकिन एजेन्टी बिरले ही आती है। आलिम-फाजिल हो जाना दूसरी बात है, रुपए पैदा करना दूसरी बात। अपने माल की श्रेष्ठता का विश्वास पैदा कर देना, यह दिल में जमा देना की इससे सस्ता तथा टिकाऊ माल बाजार में मिल ही नहीं सकता, कोई आसान काम नहीं है। एजेंटी में बड़े-बड़े राजाओं तथा रईसों का मत फेरना पड़ता है जब जाके कहीं माल बिकता है। इस संवाद के बाद रूपकुमारी घर आती है। उसे अपना घर कब्रिस्तान जैसा लगने लगता है। न कहीं फर्श, न फर्नीचर, न गमले, न झाड़-फानूस। दो चार टूटी-टाटी तिपाइयाँ, एक लँगड़ी मेज, चार-पाँच पुरानी-धुरानी खाटें। यही उस घर की बिसात थी। अब तक रूपकुमारी इसी घर में खुश थी लेकिन आज उसे यह घर खाए जा रहा है। वह अपने भाग्य को कोस रही है। दरअसल बाजार की चकाचौंध ने उसमें गहन असंतोष भर दिया। उसका चित्त अशांत हो गया था। वास्तव में बाजार यही करता है। जो व्यक्ति के पास नहीं है, उसे प्राप्त करने के लिए कुरेदता है। जो प्राप्त है उससे संतुष्ट होने नहीं देता। जो अप्राप्त है, उसे हासिल करने के लिए हमेशा इंसान को कोंचता रहता है।

आखिर मानव-निर्मित बाजार मानव पर ही इतना हावी क्यों हो गया? इसके कारणों पर विचार करते हुए हम पाते हैं कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास के साथ जैसे-जैसे सपने यथार्थ से दूर होते गए हैं वैसे-वैसे बाजार हमारे मानस पर हावी होता गया है। पुराने जमाने के बाजार जरूरतों के सौदागर थे। लेकिन आज के आधुनिक बाजार एक तरह से सपनों के सौदागर हैं। आलीशान घोड़ा, गाड़ी, बँगला, दुनिया की सैर, जैसे चकाचौंध के हसीन सपने बाजार के पंख पर सवार हमें बेचैन किए हुए हैं। अब तो स्थिति यह हो गई है कि व्यक्ति स्वयं भी वस्तुओं यानी जींसों में तब्दील हो कर बाजार में पहुँच चुका है। यह बाज़ारवाद की सबसे दु:खद तथा त्रासद परिणति है जो एक विकट भविष्य की ओर संकेत करती है जिसमें विशेष करके मध्यवर्ग बुरी तरह से उलझा हुआ है।

असोसिएट प्रोफेसर
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र,
टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान,
(डीम्ड यूनिवर्सिटी)
मुंबई-400088 (महा.)
मो.-9969078625